बी० ए० पार्ट–3 हिन्दी साहित्य (प्रतिष्ठा)

डॉ० आशा कुमारी

अंशकालीन व्याख्याता

हिन्दी विभाग

मगध महिला कॉलेज, पटना

मोबाइल नम्बर–9304098602,7004661162

Email _ ashakumari2500@Gmail.com.

'गबन' में आदर्शोन्मुख यथार्थवाद

वास्तव में प्रेमचंद ने यथार्थ और आदर्श दोनों को स्वीकार करके अपने उपन्यासों में आदर्शोन्मुख यथार्थवादी की योजना की है। उनके उपन्यास न तो पूर्णतः यथार्थवादी हैं और न आदर्शवादी। उनके प्रायः सभी उपन्यासों में इसी आदर्शोन्मुख यथार्थवाद को स्वीकार किया है। 'गबन' भी उसी परंपरा की एक कड़ी है। इसमें उपन्यासकार ने मध्यवित्त वर्ग एवं पुलिस के कारनामों की यथार्थ चित्रण किया है। इस दृष्टि से वह पूर्णरूपेण यथार्थवादी उपन्यास है। 'गबन' में यथार्थवाद की प्रधानता को देखकर कुछ विद्वानों ने उसमें 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद' को स्वीकार नहीं किया है। डॉ० राजेश्वर गुरू ने लिखा है,'' 'गबन' में प्रेमचंद ने जीवन को जैसा देखा है, वैसा ही चित्रित कर दिया है। इसमें कोई समस्या उठाकर उसका आदर्शवादी हल देने की प्रवृत्ति नहीं मिलती, किसी चरित्र पर अस्वाभाविक ढंग से आदर्शवाद का आरोप नहीं मिलता। प्रारंभ से अंत तक जीवन की विभिन्न परिस्थितियों के चरित्राकंन के द्वारा प्रेमचंद से तीसरी शताब्दी के अंतिम और चौथी शताब्दी के प्रथम चरण में देश की राजनीतिक और सामाजिक जो परिस्थिति थी अंकित कर दिया है, इसलिए इसमें प्रेमचंद के आदर्शोन्मुख यथार्थवाद के दर्शन नहीं होते।''

डॉ० राजेश्वर गुरू का यह कथन सत्य नहीं कहा जा सकता, क्योंकि उपन्यास के उत्तरार्द्ध में आदर्शवाद की स्थापना के लिए उपन्यासकार विशेष प्रयत्नशील दिखाई देता है। 'गबन' की कथावस्तु का अनुशीलन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि लेखक ने यथार्थवाद की भित्ति पर कथा का भवन निर्मित किया है, लेकिन दिवारें सभी आदर्श की है। 'गबन' की कथा के दो पक्ष है। पूर्वार्द्ध में यथार्थवाद का चित्रण है, लेकिन उत्तरार्द्ध में यथार्थवाद के साथ आदर्शवाद भी प्राप्त होता है।

इस प्रकार, 'गबन' में आदर्श और यथार्थ दोनों का पर्याप्त चित्रण हुआ है। उपन्यासकार ने आदर्श की स्थापना के लिए यथार्थ की आधारभूमि को अपनाया है। उपन्यास की कथावस्तु चरित्र–चित्रण, घटनाओं, समस्याओं आदि सभी में आदर्शोन्मुख

यथार्थवाद का प्रभाव परिलक्षित होता है। विधवा रतन, नौकरी से बर्खास्त दयानाथ, रामेश्वरी, जालपा, जोहरा, जग्गो तथा देवीदीन के द्वारा उपन्यास के अंतिम चरण में जिस सर्वोदय–बस्ती का निर्माण किया गया है, वह प्रेमचंद के आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की ही परिचायक है।

यथार्थ के साथ आदर्श का निरूपण करके प्रेमचंद ने उचित ही किया है। लोक कल्याण की दृष्टि से ऐसा करना आवश्यक भी था। यथार्थ के नाम पर समाज की दुर्बलताओं का चित्रण मात्र कर देने से जीवन के प्रति आस्था डगमगाने लगती है और पाठक निराशावादी बनकर अपने भविष्य को अंधकारपूर्ण बनाए रखता है। 'कायाकल्प' इसी मंतव्य की ओर संकेत किया है। अन्यत्र भी उन्होंने मानवीय दुर्बलताओं के अतिरंजित अथवा शुद्ध यथार्थवादी वर्णन को साहित्यकार के लिए अनुपयुक्त मानते हुए लिखा है–''यथार्थवाद हमारी दुर्बलताओं हमारी विषमताओं और हमारी क्रूरताओं का नग्न चित्र ही होता है और इस तरह यथार्थवाद हमे निराशावादी बना देता है। मानव चरित्र पर से हमारा विश्वास उठ जाता है। हमको अपने चारो तरफ बुराई ही बुराई नजर आने लगती है।'' इसके विपरीत उन्होंने यथार्थ के साथ आदर्श के समन्वय पर बल देते हुए लिखा है–''वही उपन्यास उच्चकोटि के समझे जाते हैं, जहाँ यथार्थ और आदर्श का समावेश हो गया हो। उसे आप आदर्शोन्मुख यथार्थवाद कह सकते है। आदर्श को सजीव बनाने के लिए ही यथार्थ का उपभोग होना चाहिए और अच्छे उपन्यास की यही विशेषता है। उपन्यासकार की सबसे बड़ी विभूति ऐसे चरित्रों की सृष्टि है, जो अपने सद्व्यवहार और सद्विचार से पाठक को मोहित कर लें।

'गबन' की कथावस्तु के विकास और पात्रो की मनःस्थितियों के अध्ययन से स्पष्ट है कि उपन्यास में भी प्रेमचंद ने अपनी मान्यता के अनुसार यथार्थ एवं आदर्श का मिश्रण किया है। इस उपन्यास में उन्होंने आदर्श का स्थूल रूप में वर्णन करने के स्थान पर पात्रों के क्रिया–कलापों द्वारा उसकी व्यंजना की है। इसी कारण सामान्य दृष्टि से 'गबन' का अध्ययन करने वाला पाठक उसे यथार्थवादी उपन्यास मान सकता है, किंतु वस्तुस्थिति यह है कि उपन्यास के उत्तरार्द्ध तक पहुँचते–पहुँचते उन्होंने रमानाथ एवं जालपा के चरित्र में जो उत्कर्ष दिखाया है, वह उनके आदर्शवादिता की ओर उन्मुख रोने का परिचायक है।

इस प्रकार, 'गबन' आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की ओर उन्मुख रहा है। वैसे भी यह मानव का सामान्य स्वभाव है कि वह अपने कुरूचिपूर्ण संस्कारों या घृणित वातावरण का ही चित्र आठों पहर देखते रहना नहीं चाहता बल्कि उस आदर्श लोक को देखने के लिए भी लालायित रहता है, जिसके अंतर्गत यह सृष्टि चलती रहती है। इसी कारण साहित्यकार यथार्थ चित्रण को भी आदर्श से अनुरंजित अवश्य कर देते है। प्रेमचंद का भी इस दृष्टिकोण से लिया जा सकता है। इनमें में इसके अपवाद नहीं थे उनके उपन्यासों के पूर्वार्द्ध में जीवन और जगत तथा तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण है, किंतु उत्तरार्द्ध तक पहुँचने पर वह अपने आदर्शो की ओर उन्मुख होने लगते है। अपनी इस

मान्यता का उन्होंने सर्वत्र निर्वाह किया है कि यथार्थ कठोर भूमि का आश्रय लिए बिना कला का भव्य भवन निर्मित नहीं हो सकता और जब तक उसमें आदर्श का समुचित योग न होगा तब तक उसमें सौंदर्य की प्रतिष्ठा भी नहीं की जा सकती।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि प्रेमचंद के उपन्यासों की पृष्ठभूमि यथार्थवादी है, और उनके निष्कर्ष आदर्शवादी। प्राचीन रूढ़ियों का उन्होंने सर्वथा विरोध तो नहीं किया, किंतु उनसे जीवन–विकास में अनेक बाधाएँ आती थीं–उन रूढ़ियों में वह परिवर्तन अवश्य चाहते थे। इसी कारण उन्होंने यथार्थ के साथ–साथ आदर्श को ग्रहण किया। यह ज्ञातव्य है कि उनका यथार्थवाद फ्रायडियनों की तरह नग्न व अश्लील अथवा घृणा–योग्य नहीं रहा। महाकवि तुलसीदास के श्रृंगार निरूपण के समान उसमें मर्यादा एवं उदात्त तत्व की सृष्टि रही है।